8

भाषा की महत्ता

रोहित धनकर इस लेख में इन्सान, उसके सीखने, उसकी अवधारणाओं के निर्माण व भाषा के बीच के सम्बन्ध की व्याख्या करते हैं। उनके अनुसार भाषा न सिर्फ सम्प्रेषण व शिक्षा का एक माध्यम अथवा साधन है बल्कि वह इन्सान के विचार करने व निर्णय लेने का भी आधार है। भाषा ही उसके अपने अनुभव को अर्थ देती है। असल में लेखक की बात को अगर उसके तार्किक निष्कर्ष तक ले जाएँ तो उनके अनुसार भाषा इन्सान की भावनाओं को भी अर्थ देती है। आगे लेखक भाषा के कार्य करने के ढंग व संरचना पर कुछ बातें कहते हैं और इन्सान के भाषा ज्ञान के लिए ध्वनि व दृश्य प्रतीकों के बीच मनमाने लेकिन सुनिश्चित व सार्वभौम सम्बन्ध पाते हैं। इस तरह से निर्मित तंत्र में अर्थ निर्माण की असीम सम्भावना है।

प्राथमिक शिक्षा में भाषा का केन्द्रीय महत्व और बच्चे का उस पर अधिकार इन दोनों को व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है। इस व्यापक सहमति की वजहों को समझना मुश्किल नहीं है। यह ज़ाहिर सी बात है कि भाषा सम्प्रेषण के लिए निहायत ही ज़रूरी है, न सिर्फ बच्चों के लिए बल्कि अन्य इन्सानों के लिए भी। इस आधार पर क्या यह कह सकते हैं कि भाषा गणित, विज्ञान या अन्य विषयों को समझने के लिए भी ज़रूरी है? बिलकुल, क्योंकि बच्चा सिर्फ भाषा के ज़रिए ही शिक्षा के सभी पहलुओं को जोड़ पाता है। वास्तव में, बच्चा भाषा के ज़रिए और भाषा के द्वारा ही सोचता है, निर्णय लेता है और क्रिया करता है। समाज का अंग होने के नाते भाषा बच्चे के (और बाकी सभी के) अस्तित्व में केन्द्रीय है।

अगर हमें बच्चे की शिक्षा और उसके विकास में भाषा की केन्द्रीयता को समझना है तो ऊपर वर्णित परिप्रेक्ष्य न सिर्फ साफ तौर पर उपयोगी बल्कि अनिवार्य बन जाता है। इसके बावजूद, यह अभी भी एक सीमित नज़रिया ही है। इस नज़रिए की सीमा यह है कि यह भाषा

को एक 'उपकरण' (tool) की तरह देखता है गणित समझने का उपकरण या निर्णय लेने का उपकरण। भाषा बेशक एक उपकरण है लेकिन यह उससे 'बहुत अधिक' भी कुछ है और शायद बच्चे के लिए, शिक्षा में और इन्सान की ज़िन्दगी में भाषा की केन्द्रीयता को निर्धारित करने में यह 'बहुत अधिक' खास तौर से महत्वपूर्ण है।

इन्सान न केवल अपने आसपास की दुनिया को देखते और महसूस करते हैं बल्कि उन तमाम चीज़ों को अर्थ भी देते हैं जिन्हें वे अपने आसपास देखते और महसूस करते हैं। यानी जब मैं मानसून के काले बादल देखता हूँ, तब जो प्रभाव मुझ पर पड़ता है वह महज़ एक आकृति को देखने का प्रभाव नहीं होता। यह एक उलझी सी भावना होती है जिसमें इन काले बादलों को बारिश से जोड़ने और फिर नाचते मोर व गीले कपड़ों से मुझे होने वाली परेशानी, सब शामिल है। अगर मैं यह सम्बन्ध व जुड़ाव न बना पाऊँ तो मेरे लिए काले बादल का कोई अर्थ नहीं होगा और मुझ पर इसका कोई असर नहीं होगा। वह सिर्फ एक ऐसी आकृति होगी जिसका मुझे अहसास हुआ।

यह 'जोड़ने की प्रक्रिया' ही है जो दुनिया की तमाम चीज़ों को अर्थ देती है। यह अर्थ प्रदान करने की प्रक्रिया ही चीज़ों के दर्जे को हमारे मानस में, महज़ 'होने' से 'अर्थपूर्ण होने' में बदलती है। यह अर्थपूर्णता हम अवधारणाओं के माध्यम से प्रदान करते हैं। इन अवधारणाओं को विकसित करने व स्पष्टता से निरूपित करने के लिए हम अपने मानस में बहुत सारे प्रतीक बनाते हैं, और उन प्रतीकों व अवधारणाओं के बीच आपसी सम्बन्ध और जुड़ाव बनाते हैं। इन प्रतीकों के साथ मानसिक गतिविधि (प्रतीकों का लेन-देन या Symbolic Transaction) ही अवधारणा के निर्माण की प्रक्रिया है।

भाषा इस प्रतीकों के लेन-देन की प्रक्रिया की बुनियाद है और असल में इस पूरी प्रक्रिया का अदृश्य व अनिवार्य और अविभाज्य अंग भी है। यही प्रक्रिया व्यक्ति के 'अवधारणात्मक ढाँचे' का निर्माण करती है अथवा उसके निर्माण की तरफ ले जाती है।

अवधारणाओं को 'नाम' दिए बिना इसमें से कुछ भी सम्भव नहीं। अवधारणाओं को दिए गए इन नामों को ही हम भाषा में बतौर शब्द जानते हैं। इस अवधारणात्मक ढाँचे के विकास और उसके निर्माण को ही हम समझ का विकास और समझ प्राप्त करना कहते हैं। यानी, भाषा व समझ एक दूसरे पर निर्भर हैं और एक का अस्तित्व दूसरे के बगैर सम्भव नहीं है।

लिहाज़ा, भाषा महज़ एक 'उपकरण' नहीं है। यह समझ का अनिवार्य और अलग न किया जा सकने वाला हिस्सा है। यह इन्सान के दिमाग (Mind) और आत्मचेतना का समुच्चय है, क्योंकि इन्सानी दिमाग समझ की समग्रता के अलावा क्या है! यह समझ के विकास के साथ विकसित होता है, और जब समझ का विकास अवरुद्ध हो जाता है तो इसका विकास भी अवरुद्ध हो जाता है। यह निष्कर्ष प्राथमिक शिक्षा के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है।

यह सम्भव है कि भाषा और समझ के विकास की एक निश्चित अवस्था के बाद, इन दोनों के लिए एक बुनियादी ढाँचा उपलब्ध हो जाए ताकि समझ का विकास होता रह सके तब भी

जब कि भाषा उसके साथ साथ उतनी ही विकसित न हो और यह भी कि भाषा का विकास होता रहे जबकि समझ का विकास उतना ना हो। लेकिन यह भी निश्चित है कि प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर इस तरह की 'विभाज्यता' सम्भव नहीं है। प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर भाषा और समझ दोनों का विकास बच्चे के मानसिक विकास के सन्दर्भ में एक दूसरे से अलग न किए जा सकने वाले पूरक पहलू हैं।

चलिए अब हम भाषा के कुछ पहलुओं को भी देखते हैं।

बोलचाल की भाषा की आधारभूत इकाई शब्द है। शब्द ध्वनियों का संयोजन होता है। अगर ध्वनियों का यह संयोजन किसी अवधारणा से नहीं जुड़ा है, तो यह ध्वनियों का महज़ एक अर्थहीन संयोजन ही रहेगा और शब्द नहीं बन पाएगा। किसी खास तरह के शब्द संयोजन को, किसी खास अवधारणा से जोड़ने के लिए कोई तार्किक आधार और नियम नहीं हैं। किसी भाषा का उपयोग करने वालों के लिए यह जुड़ाव मनमाना है यानी चुनाव में बहुत स्वतंत्रता है, पर बाद में यह स्थाई और सार्वभौमिक हो जाता है। 'पेड़' ध्वनियों का एक संयोजन है, जो एक खास अवधारणा से जुड़ता है और यह सम्बन्ध स्थाई है। ऐसा नहीं है कुछ समय बाद कुछ अन्य ध्वनियों का संयोजन इस अवधारणा से सम्बद्ध हो जाएगा। उदाहरण के लिए, जिसे आज हम 'पेड़' कहते हैं इससे 'क्रिकेट' शब्द सम्बद्ध नहीं होने लगेगा, यद्यपि पेड़ का उस अवधारणा, जिससे वह सन्दर्भित है, के साथ सम्बन्ध उतना ही मनमाना है जितना की क्रिकेट का 'क्रिकेट' की अवधारणा से।

अर्थपूर्ण भाषा निर्माण के लिए शब्दों को नियमों के ढाँचे में उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, उपयुक्त अर्थ निर्माण के लिए शब्द-क्रम कुछ निश्चित नियमों का पालन करता है। ये नियम भी मनमाने होते हैं लेकिन इनकी प्रकृति भी स्थाई और सार्वभौमिक होती है। इसलिए भाषा मौखिक प्रतीकों के एक नियम द्वारा संचालित ढाँचा है जिसके जरिए इन्सान अर्थ निर्माण करते हैं। यह ढाँचा बहुत ही व्यवस्थित है और पूरी तरह से मानव रचित है। यद्यपि ध्वनियों के संयोजन की संख्या (किसी भी) भाषा में सीमित ही है, लेकिन भाषाई ढाँचे में अर्थ निर्माण की अपरिमित क्षमता होती है।

भाषा सीखने का मतलब है इस ढाँचे पर अधिकार और अर्थ निर्माण के लिए, अर्थ को अर्जित करने के लिए व अर्थ को अभिव्यक्त करने के लिए इस ढाँचे का उपयोग।

मौखिक भाषा ध्वनि प्रतीकों से बनी होती है और लिखित भाषा दृश्य प्रतीकों से या किसी सतह पर कुछ चिह्न बनाने (Marking) से बनी होती है। ये चिह्न वर्ण (Letter) होते हैं। वर्णमाला के वर्ण (और उनका संयोजन) ध्वनियों को निरूपित करते हैं। इन 'चिह्नों' का इन ध्वनियों से सम्बन्ध भी मनमाना होता है लेकिन यह भी स्थाई और सार्वभौमिक होता है।

हम हमेशा (मानसिक रूप से) लिखित भाषा को मौखिक भाषा में 'अनूदित' करते हैं और तब उसका अर्थ समझ पाते हैं। अतः मौखिक भाषा की तुलना में लिखित भाषा के ज़रिए अर्थ तक पहुँचने के चरण अधिक हैं।

मौखिक भाषा की अन्तःक्रिया में 'गैर-मौखिक सम्प्रेषण' (जैसे, चेहरे के भाव, हाथों की मुद्रा) के लिए जगह और गुंजाइश होती है और साथ ही इसमें तुरन्त स्पष्टीकरण की गुंजाइश भी होती है। लिखित भाषा में आम तौर पर यह सम्भव नहीं होता अतः लिखित भाषा कुछ अतिरिक्त प्रतीकों का भी उपयोग करती है और नियमों के एक और अधिक सुदृढ़ ढाँचे का अनुसरण करती है।

इस संक्षिप्त लेख का मकसद भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण नहीं है, बल्कि इसका मकसद महज़ उन मुद्दों की चर्चा करना है जो प्राथमिक स्तर में सीखने-सिखाने को सीधे प्रभावित कर सकते हैं। इस संक्षिप्त लेख में जिन निष्कर्षों तक हम पहुँचे हैं वे हैं:

1. एक बच्चे के सन्दर्भ में समझ का विकास और भाषा का विकास यह दोनों एक दूसरे पर पूर्णतया निर्भर हैं।
2. ध्वनियों के संयोजन (शब्द) और अवधारणाओं के बीच सम्बन्ध मनमाना है और इसका कोई तार्किक आधार नहीं है, लेकिन यह सम्बन्ध स्थाई और सार्वभौमिक है।
3. वाक्य बनाने और अर्थ निर्माण के लिए काम में लिया जाने वाला नियमों का ढाँचा भी मनमाना ही है, हालाँकि यह भी स्थाई और सार्वभौमिक है।
4. अतः भाषा प्रतीकों का एक सुव्यस्थित ढाँचा हैं।
5. इस भाषाई ढाँचे की अर्थ निर्माण की क्षमता असीमित है।
6. लिखित भाषा के शब्द ध्वनियों के संयोजन से सम्बद्ध होते हैं और उनको निरूपित भी करते हैं। यह सम्बन्ध भी मनमाना होता है और साथ में स्थाई और सार्वभौमिक भी।
7. मौखिक भाषा में अर्थ तक पहुँचने की तुलना में लिखित भाषा में अर्थ तक पहुँचने के लिए एक अतिरिक्त चरण होता है।

प्राथमिक स्तर पर सीखने-सिखाने के लिए इन निष्कर्षों के बहुत से निहितार्थ हैं, हम इनमें से दो की थोड़ी बात करेंगे। जो मनमाना है उसे बच्चा अकेले ही पता नहीं कर सकता। इसके लिए भाषा का प्रयोग करने वाले अन्य लोगों की मदद अत्यावश्यक है जो भाषा के इस मनमाने सम्बन्ध को समझ चुके हैं। साथ ही, यह अभ्यास की माँग भी करता है और इसलिए अवधारणात्मक समझ की तुलना में लगातार अभ्यास महत्वपूर्ण हो जाता है।

लेकिन जो नियम-संचालित ढाँचा है उसमें बच्चा निपुणता तभी प्राप्त कर सकता है जब वह उसके साथ अवधारणात्मक रूप से जुड़े और यहाँ अवधारणात्मक समझ ही प्रमुख होती है न की महज़ उसका अभ्यास। हालाँकि भाषा सीखने में दोनों की ज़रूरत होती है, कुल मिला कर अवधारणात्मक समझ और अर्थ-निर्माण की प्रक्रिया ही महत्वपूर्ण होती है। फिर भी, कुछ प्रक्रियाओं के मामले में, मसलन लेखन प्रणाली पर अधिकार बनाने के लिए हम लगातार अभ्यास की ज़रूरत को कम करके नहीं आँक सकते।

इस छोटे से लेख में कुछ विरोधाभासी दावे भी हैं और जिनके लिए कुछ स्पष्टीकरण ज़रूरी हो जाता है। यह दावा किया गया है कि शब्द मनमाने क्रम में रखी गई ध्वनियों का संयोजन होते हैं। भाषा विज्ञान में ऐसे पर्याप्त शोध हैं जो बताते हैं कि शब्द निर्माण के लिए ध्वनियों के संयोजन के निश्चित नियम हैं जो सार्वभौमिक हैं। लेकिन इन नियमों को मान लेने के बावजूद अधिकांश शब्द ऐसे हैं जो ध्वनियों के संयोजन के लिए और साथ ही, उनसे अवधारणाओं को जोड़ने के लिए भी मनमानेपन के गुण को ही मानते हैं।

दूसरा दावा है कि भाषा की सबसे छोटी अर्थपूर्ण इकाई शब्द है। एक हावी मत यह भी है कि भाषा कि सबसे छोटी अर्थपूर्ण इकाई वाक्य है। यद्यपि यह सही है कि ज्ञान के दावे, अनुरोध और प्रश्न को अभिव्यक्त करने के लिए वाक्य ही सबसे छोटी इकाई है; लेकिन दिमाग में एक विचार के कौंधने के लिए शब्द काफी है। और विचार के कौंधने को अर्थ का कौंधना माना जाना चाहिए।

तीसरा दावा है कि वाक्य में शब्दों का क्रम मनमाना होता है। भाषावैज्ञानिक शोधों ने यह स्थापित किया है कि सभी इन्सानी भाषाओं में कुछ सार्वभौमिक पैटर्न होते हैं और ये पैटर्न वाक्य में शब्दों के क्रम को निर्धारित करते हैं। इस तरह के दावे भी हैं कि बच्चे कभी भी वाक्य में शब्दों के क्रम को लेकर गलती नहीं करते हैं और यह भी कि ये नियम इन्सान में दिमाग में जन्मजात अंकित होते हैं। लेकिन चूँकि किसी वाक्य के एक से अधिक ढाँचे सम्भव हैं और बच्चे इनमें गलतियाँ भी करते हैं, इसलिए इनको सीखने में अनुभव की भी भूमिका है। यह सही है कि सार्वभौमिक पैटर्न होते हैं, लेकिन वे भाषा के कुछ खास नियमों के रूप में जन्मजात होते हैं या वे इन्सान की संज्ञानात्मक संरचना (Human Cognitive Architecture) की अभिव्यक्ति होते हैं, इसको लेकर विवाद बना हुआ है। अतः यहाँ मनमानापन थोड़ा सीमित है।

कुछ जगहों पर ध्वनियों के पैटर्न और अर्थ में मेल आदि को एक भाषाई समुदाय के लिए 'सार्वभौमिक और सुस्थिर' बताया गया है। यह एक निश्चित जगह और काल के लिए ही सही है। समय और अलग-अलग भाषाई समुदायों के साथ-साथ भाषाएँ अपनी शैली और शब्दों से जुड़े अर्थ के मामले में बदलती रहती हैं। पर जहाँ तक किसी भाषा को लोग साँझा तौर पर समझते हैं, वहाँ तक तो वे 'सामान्य तौर पर स्वीकृत और सुस्थिर' होने का गुण रखती ही हैं।

अन्त में, इन्सान के बनने में भाषा की भूमिका केन्द्रीय है। इस पहलू की यहाँ विस्तार में बात नहीं की है क्योंकि यहाँ फोकस उन बिन्दुओं को रेखांकित करना है जो कक्षा में भाषा शिक्षण के लिए तुरन्त काम में लिए जा सके।

स्रोत

- रोहित धनकर, 2009, "इम्पॉर्टेन्स ऑफ लैंग्वेज", *लर्निंग कर्व*, xiii, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, बेंगलूरू।